शिक्षकों की कलम से

विगत कुछ अंकों से हमने एक नया कॉलम शुरू किया है जिसके माध्यम से शिक्षक एवं शिक्षक प्रशिक्षक अपने अनुभवों को साझा कर सकें। इस बार तीन अनुभव प्रस्तुत हैं। इन पर अपनी राय दीजिए। साथ ही, आपसे एक छोटी-सी अपेक्षा होगी कि आप अपने अनुभवों को भी हमारे पास ज़रूर भेजिए।

1. टेसू राजा बीच बाज़ार ..... रवि कान्त
2. सतत् एवं व्यापक मूल्यांकन ..... दिलिप चुघ
3. बच्चों के सवाल ..... केवलानन्द काण्डपाल

बच्चों के सवाल

केवलानन्द काण्डपाल

बच्चों के बारे में हमारी रूढ़ अवधारणा यह है कि बच्चे सीखना नहीं चाहते, चीज़ों को जानना-समझना नहीं चाहते। ऐसे आरोप अक्सर सरकारी विद्यालय के बच्चों पर आसानी से मढ़ दिए जाते हैं। इन आक्षेपों के गम्भीर सामाजिक निहितार्थ हैं। इन विद्यालयों में प्रायः ऐसे वर्ग एवं सामाजिक समूहों के बच्चे आते हैं जिनके पास शिक्षा के और कोई विकल्प होते ही नहीं। इस तरह का दृष्टिकोण एक विशेष सामाजिक हैसियत वाले बच्चों और विशेषकर बालिकाओं के शैक्षणिक विमर्श के मुद्दों की उपेक्षा करने के साथ ही उन्हें हाशिए पर धकेलने का कार्य करता है। यह देखने में आता है कि परिवार की आर्थिक सामर्थ्य ठीक होने पर सबसे पहले बालकों को बेहतर समझे जाने वाले प्रायवेट स्कूलों में भेजने का प्रयास किया जाता है जबकि बालिकाओं को सरकारी विद्यालयों में ही भेजा जाता है।

डायट में अकादमिक अभिकर्मी के सेवा दायित्वों के अन्तर्गत जनपद के प्रारम्भिक सरकारी विद्यालय ही हैं। इस क्रम में विद्यालय अनुश्रवण एवं अकादमिक अनुसमर्थन हेतु इन विद्यालयों में जाना होता रहता है। मैं हमेशा से ही इसे बच्चों से बातचीत करने, उनके सामाजिक एवं शैक्षिक सन्दर्भ को समझने और इस परिप्रेक्ष्य में अध्यापकों से बातचीत करने के अवसर के रूप में देखता रहा हूँ।

बच्चों, अध्यापकों एवं विद्यालयों के परिप्रेक्ष्य एवं उनकी शैक्षणिक ज़रूरतों को समझने के मन्तव्य से जनपद बागेश्वर के दुर्गम क्षेत्र में स्थित राजकीय प्राथमिक विद्यालय, सिमकुना जाने का अवसर मिला। कुल 51 बच्चे इस विद्यालय में नामांकित हैं। उस दिन कुल 46 बच्चे विद्यालय में उपस्थित थे। बच्चों के साथ बातचीत से ज्ञात हुआ कि इस विद्यालय में आने वाले अधिकांश बच्चे विषम

सामाजिक परिस्थितियों एवं निर्धन परिवारों से ताल्लुक रखते हैं।

विद्यालय भ्रमण के दौरान पूरे दिन के कार्यक्रम के रूप में सबसे पहले विद्यालय की अध्यापिकाओं के साथ चर्चा और उसके बाद सभी कक्षाओं के बच्चों से एक-साथ बातचीत करने का इरादा था। मेरे मन में योजना थी कि पहले सभी बच्चों के साथ सामान्य बातचीत करके उनके परिप्रेक्ष्य को जानने-समझने की कोशिश की जाए। बाद में कक्षा 3, 4, 5 के बच्चों से बातचीत करके इनके शैक्षणिक स्तर और ज़रूरतों को जानने का प्रयास किया जाए। विद्यालय की अध्यापिकाओं से अनुमति लेकर इसी प्रकार की व्यवस्था बना ली गई।

बातचीत की शुरुआत में परिचय हुआ। बच्चों ने मेरे बारे में बहुत-से सवाल पूछे। ऐसा लग रहा था मानो बच्चे पहले मुझे जाँच-परख लेना चाहते हैं। मेरी शिक्षा, बचपन, स्कूल, गाँव, काम आदि के बारे में बहुत सारे सवाल किए। प्रायः लोग बच्चों से परिचय के क्रम में इस प्रकार के सवालों से बचना चाहते हैं। बातचीत के इस क्रम में धीरे-धीरे उनका परिचय होता जा रहा था, कुछ अलग से पूछने-जानने की कम ही ज़रूरत पड़ रही थी। कुछ बच्चे अभी भी संकोच के दायरे से बाहर आने में झिझक रहे थे। इनको बातचीत में कैसे शामिल किया जाए, मेरे मन में यही उथल-पुथल चल रही थी। इसी बीच एक मुखर बच्चे ने सवाल किया कि मुझे क्या पसन्द है और क्या नापसन्द। बस फिर क्या था, मुझे बातचीत को आगे बढ़ाने का सूत्र मिल गया। मैंने अपनी पसन्द-नापसन्द को ईमानदारी से बताया और अपनी बचपन की पसन्द-नापसन्द को भी साझा कर लिया। मेरा अनुमान था कि इस दिशा में बात को आगे बढ़ाने से बच्चों के सामाजिक सन्दर्भ को समझने में मदद मिल सकती है।

अतः तय किया गया कि प्रत्येक बच्चा अपनी पसन्द/नापसन्द को साझा करेगा। इस उपक्रम से उन बच्चों को बातचीत में शामिल करने में मदद मिली जो अभी तक संकोच में सिमटे हुए थे।

जब बातचीत आगे बढ़ी कि किसे क्या अच्छा लगता है, कब बुरा लगता है - इस क्रम में बहुत सारे संवेदनशील मुद्दे सामने आए। इनमें से कुछ महत्वपूर्ण निम्न प्रकार से हैं-

1. एक बच्चे ने बताया कि जब अध्यापिका/अध्यापक उसे बुद्धू कहते हैं, उसे बहुत बुरा लगता है (कक्षाओं में बच्चों के नाम गढ़ना – लेबलिंग एवं विभेदीकरण)।
2. एक बालिका ने कहा कि उसे घर पर रोज़ झाड़ू लगानी पड़ती है। "मेरा भाई कभी यह काम नहीं करता। मुझे बहुत बुरा लगता है" (परिवार में लैंगिक विभेद के प्रति बालिका की संवेदनशीलता)।
3. बालिकाओं का कहना था कि लड़के

उन्हें कैरम नहीं खेलने देते। कहते हैं कि लड़कियों के खेल खेलो (विद्यालय में लैंगिक विभेद के प्रति बालिकाओं का स्पष्ट नज़रिया)।

4. एक बालिका ने बताया कि उसे बहुत बुरा लगता है जब उसे विद्यालय आने से मना किया जाता है और घर पर ही रोक दिया जाता है। इस बालिका के बारे में बच्चों ने बताया कि एक बार यह घर पर रोके जाने के बावजूद घरवालों को बिना बताए, चुपचाप मध्यावकाश के बाद विद्यालय आ गई थी (बालिकाओं की शिक्षा को लेकर अभिभावकों में लापरवाही एवं बच्चे में विद्यालय के प्रति स्वाभाविक लगाव)।

इस बातचीत के दौरान ऐसे कई मुद्दे निकलकर सामने आए जिनकी हम घर पर या फिर विद्यालय में जाने-अनजाने उपेक्षा करते रहते हैं। इस प्रारम्भिक बातचीत का मेरा उद्देश्य भी यही था। सो बच्चों के नज़रिए के बारे में मुझे कुछ महत्वपूर्ण सुराग मिल रहे थे। शिक्षणशास्त्रीय सन्दर्भों में इन मुद्दों की उपेक्षा नहीं की जा सकती है। विद्यालय स्तर पर इस बारे में क्या किया जा सकता है, इस विषय में अध्यापकों से विचार-विमर्श किया गया।

बच्चों के संज्ञानात्मक परिप्रेक्ष्य को जानना-समझना ज़रूरी था सो बच्चों के साथ मिलकर तय किया गया कि बातचीत के अगले क्रम में पहले आधा घण्टा मैं बच्चों से सवाल करूँगा, बाद में एक घण्टा या उससे भी अधिक बच्चे मुझसे सवाल करेंगे और मुझे उनके सवालों के जवाब देने होंगे। मैंने यह पहले ही स्पष्ट कर दिया था

कि कुछ ऐसे प्रश्न हो सकते हैं जिनका उत्तर मुझे न आता हो, ठीक उसी प्रकार जैसे कुछ प्रश्नों के उत्तर बच्चों को नहीं आते हैं। शर्त यह थी कि सवालों के तुरन्त उत्तर देने का कोई दबाव नहीं होगा। सवालों के जवाब ढूँढ़ने के लिए छान-बीन, खोजबीन आगे भी जारी रह सकती है। बच्चों को यह ईमानदारी पसन्द आई। उनकी दृष्टि में अब बच्चों और मेरे बीच मामला बराबरी का था।

अपनी बारी में मैंने बच्चों से अधिकांशतः स्मृति आधारित प्रश्नों एवं कुछेक समझ आधारित प्रश्नों को आधार बनाकर बातचीत को आगे बढ़ाया। इस बार मुख्यतः कक्षा 3, 4 एवं 5 के बच्चों से बात करने का विचार था। विश्लेषण एवं तर्क आधारित प्रश्नों को मैं जानबूझकर प्रयोग में नहीं ला रहा था। कहीं-न-कहीं मेरी मान्यता थी कि विषम परिस्थितियों से आए और दुर्गम जगह पर स्थित विद्यालय में अध्ययनशील इन बच्चों से इतनी अपेक्षा करना न्यायसंगत नहीं होगा। अफसोस, कि मैं गलत साबित हुआ। बहुत बार हम बच्चों को कम करके आँकते हैं, यही भूल मैं भी कर रहा था।

मेरे हिस्से के सवाल-जवाब का आधा घण्टा पूरा हुआ। अब प्रश्न पूछने की बारी बच्चों की थी। बच्चों ने एक घण्टा नहीं बल्कि पूरे दो घण्टे बीस मिनट तक प्रश्न किए और वो भी पूरे 47 प्रश्न। यह प्रश्न किताबी थे या नहीं, इसका अनुमान आप बच्चों के प्रश्नों की बानगी से कर सकते हैं-

- दीपक (कक्षा-5) - अँग्रेज़ों ने हमें किस प्रकार गुलाम बनाया? पहले तो अँग्रेज़ व्यापार करने आए थे।
- प्रकाश (कक्षा-5) - नैनीताल की खोज किसने की? नैनीताल को बसाने में पी. बैरन की उत्सुकता क्यों रही होगी?
- दिव्या (कक्षा-5) - नील एवं अमेज़न, दोनों नदियों में से किस नदी को सबसे बड़ी नदी कहना चाहिए?
- विवेक (कक्षा-3) - भारत का सबसे बड़ा सम्मान कौन-सा है? यह किसी व्यक्ति को कब दिया जाता है?
- दीपक (कक्षा-5) - भारतीय झण्डे का प्रारूप किसने तैयार किया? इससे पूर्व झण्डा कैसा था? किसी देश के लिए झण्डा क्यों ज़रूरी है? किसी देश के लिए झण्डा किस प्रकार का होगा, इसे कौन तय करता है?
- अंकिता (कक्षा-3) - उत्तराखण्ड के राज्यपाल किस राज्य के रहने वाले हैं?
- अमित (कक्षा-4) - मछली की तो नाक नहीं होती, तो फिर वह साँस कैसे लेती है?
- राजेश (कक्षा-4) - जलियांवाला बाग काण्ड का हमारे देश की आज़ादी से क्या सम्बन्ध है?
- दीपक (कक्षा-5) - महात्मा गाँधी तो अहिंसावादी थे, फिर उन्होंने करो या मरो का नारा क्यों दिया?

• भावना (कक्षा-4) - पेड़-पौधे हमारी तरह साँस लेते हैं। फिर इनको काटना एक तरह से प्राणी को नष्ट करना नहीं है?

ये वो प्रश्न भी हैं जिन्हें मैं हमेशा याद रखना चाहूँगा। बच्चों के प्रश्न एकदम से उनकी पाठ्यपुस्तकों से भले ही न हों परन्तु इन प्रश्नों को बेतुके प्रश्नों की श्रेणी में किसी भी हिसाब से नहीं रखा जा सकता। बच्चों के ये प्रश्न स्मृति एवं समझ के स्तर से उच्च स्तर की किसी श्रेणी में आते हैं। इससे एक अन्य महत्वपूर्ण समझ मज़बूत होती है कि बच्चे किसी भी तथ्य/ज्ञान की सतही समझ से सन्तुष्ट न होकर उसमें गहरे उतरना चाहते हैं।

बच्चों के द्वारा किए गए एक के बाद दूसरे, और फिर मेरे उत्तर की स्पष्टता के लिए किए गए प्रश्नों ने मुझे दम लेने का भी मौका नहीं दिया। उनको उत्तर एवं स्पष्टीकरण देने में मुझे बहुत आनन्द आया। सौभाग्यवश इतिहास एवं भूगोल मेरी रुचि का विषय होने के कारण मैं बच्चों को कुछ हद तक सन्तुष्ट कर सका। यदि प्रश्न मेरे रुचि के क्षेत्र से नहीं भी होते या मेरी अवधारणात्मक समझ के दायरे से बाहर भी होते तो यह मेरी पेशेवर ज़िम्मेदारी होती कि मैं पुनः पूरी तैयारी के साथ बाद की मुलाकातों में बच्चों के बीच जाकर संवाद करूँ। वैसे भी हमारे बीच मित्रता का इतना मज़बूत पुल बन गया था कि मैं किसी प्रश्न को तत्काल सम्बोधित न भी कर पाता

तो बच्चे यह मानने को तैयार थे कि हमें हरेक सवाल का जवाब आना ज़रूरी नहीं है और इन प्रश्नों के बारे में आगे खोजबीन की जा सकती है। यह बात तो हमारी बातचीत के प्रारम्भ में ही किए गए समझौते की शर्त जो थी। मूलभूत बात यह थी कि बच्चों को प्रश्न करने के अवसर दिए जाएँ।

लगभग ढाई घण्टे की हमारी बातचीत में बच्चे प्रश्न कर रहे थे, प्रति-प्रश्न कर रहे थे और मैं उत्तर देने का प्रयास कर रहा था। यह तरीका बच्चों को बहुत पसन्द आया।

बच्चों से बातचीत, उनके प्रश्नों की गहराई, उनकी संलग्नता, प्रति-प्रश्नों से अपनी समझ को स्पष्ट करने का तरीका आदि से यह अनुमान लगाना कठिन नहीं है कि बच्चे सीख रहे थे और सीखना चाह रहे थे।

बच्चों के सवालों, प्रति-सवालों से एक बात तो बहुत साफ है कि बच्चे ज्ञान-सृजन की प्रक्रिया के लिए हमेशा तत्पर रहते हैं। अध्यापक के रूप में

हमें बस इतना करना है कि उनके सवालों को सम्बोधित करें। इसी क्रम में बच्चे के विषयगत परिप्रेक्ष्य को समझें, उनके अधिगम स्तर (स्मृति, ज्ञान, समझ, विश्लेषण एवं मूल्यांकन स्तर) का पता लगाएँ। आकलन एवं मूल्यांकन करते चलें। उसी के अनुरूप अपनी शिक्षण प्रक्रिया का नियोजन एवं समंजन करें। यह सब साथ-साथ चलता रहता है।

इन सभी मुद्दों पर विद्यालय की अध्यापिकाओं से विचार-विमर्श करके मैं सन्तोषभाव लेकर लौटा। एक विचार की स्पष्टता के साथ लौटा कि अध्यापक ही हमेशा सवाल क्यों करें? बच्चे सवाल क्यों न करें? मूल बात है कि सवाल उठाए जाएँ। बच्चों से सवालों के तुरन्त उत्तर प्राप्त करने की हमारी अपेक्षा बच्चों को रटने की ओर धकेलती है। इसके विपरीत सवालों के हल मिल-जुलकर खोजने की लोकतांत्रिक प्रक्रिया बच्चों में सीखने के प्रति स्वाभाविक प्रेम विकसित करती है, यह सबसे महत्वपूर्ण बात है। बच्चों के द्वारा किए जाने वाले सवालों के गम्भीर शैक्षणिक निहितार्थ हो सकते हैं। बच्चों के सीखने एवं अध्यापकों द्वारा सिखाने की प्रक्रिया के महत्वपूर्ण सुराग इसमें छिपे हो सकते हैं। महान वैज्ञानिक अल्बर्ट आंइस्टीन ने एक बार कहा था, "महत्वपूर्ण बात यह है कि प्रश्न पूछना जारी रहना चाहिए।" बच्चों से बातचीत से रोमांचित हूँ कि बच्चे तो हमेशा जानने, समझने एवं सीखने के लिए तत्पर रहते हैं बशर्ते हम बच्चों को सवाल करने के अवसर तो दें।

केवलानन्द काण्डपाल: ज़िला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान, बागेश्वर, उत्तराखण्ड में कार्यरत।
सभी चित्र व सज्जा: कनक शशि: स्वतंत्र कलाकार के रूप में पिछले एक दशक से बच्चों की किताबों के लिए चित्रांकन कर रही हैं। एकलव्य, भोपाल के डिज़ाइन समूह के साथ कार्यरत।